अध्याय - तृतीय

आर्थिक जीवन

आर्थिक जीवन

चौलुक्य कालीन अर्थिक दशा को जानने के लिए प्रमाण हमारे पास अल्प है। ऐसी स्थिति में जो भी प्रमाण है उन्ही के आधार पर आर्थिक जीवन और क्रिया कलापों का विवेचन किया गया है। कुमारपाल चरित[1] और कुमारपाल प्रतिबोध में राजधानी अनहिलवाड़ा का जो वर्णन है उससे चौलुक्यकालीन आर्थिक जीवन की झाँकी मिलती है। अनहिलपाटक बारह कोस के घेरे में वसा था। इसमें अनेक मंदिर और उच्च विद्यालय थे। इसमें (84) चौरासी मोहल्ले थे। इतनी संख्या यहाँ के बाजारों को भी यहाँ स्वर्ण और रजत की मुद्रा ढ़ालने वाले गृह भी थे। सभी वर्गो का अपना पृथक–पृथक क्षेत्र होता था। व्यापार की वस्तुओं में हाथी दाँत, रेशम, हीरे, मोती आदि उल्लेखनीय थे। मुद्रा–विनिमय करने वालों का अपना अलग बाजार था, तो सुगन्ध बेचने वालों का बाज़ारं अलग था। चिकित्सकों, कलाकारो, स्वर्णकारों और चाँदी के काम करने वालों का बाजार अलग–अलग थे। नाविकों, चारणों तथा वंशावालियों के विवरण रखने वालों के स्थान अलग–अलग थे। अट्ठारहो 'वरूण' नगर में निवास करते थे। राजप्रसाद के चतुर्दिक भव्य–भवनों की पंत्तिया थी। हाथी घोड़े और रथ तथा शस्त्रागार के लिए भवन बने थे। राज्यधिकारियों तथा जन आय–व्यय निरीक्षको के लिए भी पृथक स्थान थे।

प्रत्येक प्रकार के माल के लिए पृथक–पृथक चुँगी घर बने थे। यहाँ आयात–निर्यात तथा विक्रयकर एकत्रित किया जाता था। कर तथ चुँगी लगने वाली वस्तुओं में मशाला, फल दवाईया, कपूर, धातु तथा देश विदेश की सभी बहुमूल्य वस्तुंए थीं। यह समस्त संसार के व्यापार का केन्द्र था। इस स्थान में प्रतिदिन एक खास (टका) कर के रूप में एकत्र होता था यहाँ की सम्पन्नता इस इस बात का गवाह से सरलतापूर्वक अनुमान किया जा सकता है कि पानी माँगने पर दूध मिलता था। यहाँ

---

[1] हेम चन्द्र, कुमारपाल चरित, प्रथम सर्ग।

बहुत से जैन मन्दिर थे। एक झील के तट सहस्रलिंग महादेव का मन्दिर निर्मित था यहाँ की जनसंख्या गुलाबी सेबों, चन्दन, आम्रवृक्षों तथा विभिन्न प्रकार की लताओं के मध्य विचरण कर प्रसन्नता का अनुभव करती थी। यहाँ के झरनों से अमृत जल निकलता था।[2]

उपर्युक्त विवरण की पुष्टि तो अन्य साधनों से नही होती क्योंकि अनहिलवाड़ा का अब कोई ऐसा अवशेष नही है जिससे अपर्युक्त विवरण का समाधान हो सके। फोर्वेस का कथन है कि राज्य से ले जाए जाने वाले सभी मालों पर निकासी कर या दान लिया था।[3] पोत समुद्र व्यवसायी तथा उद्योगपतियों और समुद्री लुटेरो का भी उल्लेख आया है। व्यवसायियों तथा उद्योगपतियों को वाणिज्य, महत्तर और महाजन कहा जाता था।[4] इससे हमारा अनुमान है कि वहाँ का व्यापार उन्नत अवस्था में था। लोगों की अभिरूचि उद्योग–धन्धों की ओर थी। व्यापारिक संगठन सुदृढ़ था तथा विभिन्न समुदायों में आपसी लगााव था।

अनहिलवाड़ा के जीवन के अतिरिक्त ग्रामों में अर्थिक जीवन को सबसे पहली कड़ी कृषि थी । कृषि को राज्य की आय का सबसे बड़ा स्रोत कहाँ गया है। हेमचन्द्र ने दुयाश्रय काव्य में यह स्वीकार किया है कि ग्राम वासियों से भूमि कर लिया जाता था जो राज्य की आय का प्रमुख स्रोत था।[5]

राज्य की आय के प्रमुख स्रोत निम्नलिखित है–

1–कृषि

2–उद्योगधन्धे

3–विदेशी व्यापार

---

[2] टाड, वेस्टर्न इण्डिया, पृ0 156–58।

[3] रासमाला, अध्याय 13 पृ0 235।

[4] मोहराजपराजय पराजय, अंक 3 पृ0 50–70।

[5] द्वयाश्रय काव्य 3, श्लोक 18।

1 कृषिः-

भारत की प्राचीन परम्पराओं और कार्य करने की अभिरूचियों के परिणाम स्वरूप चौलुक्य कालीन गुजरात में भी अधिकतर लोग कृषि कार्य ही करते थे। गुजरात की भूमि उर्वरा थी। इस बात को समकालीन लेखक हेमचन्द्र और सोमप्रभा दोनों ही स्वीकार करतें है। मुसलमान लेखक अब्दुला वासफ, जिसका समय 1238 ई0 है, ने गुजरात का अत्यधिक सुन्दर वर्णन किया है। यद्यपि यह विवरण हमारे शासको से बाद का है परन्तु इतने अल्प समय में न तो प्रकृति का रूख बदलता है और न भूमि बंजर बन जाती है। अतः इस विवरण से पता चलता है कि वर्ष की चार ऋतुओं में 17 प्रकार के पुष्प गुजरात प्रान्त में पल्लवित होतें थे। वायु का प्रवाह इतना पवित्र था कि यदि किसी पशु का चित्र लेखनी से खीचा जाता तो जीवित सा प्रतीत होता।

दूसरी आश्चर्य की बात यह थी कि बहुत से पौधे जिनकी औषधियां बनती थी यहाँ अधिक मात्रा में पैदा किए जाते थे। जाड़े तक के मौसम में घण्टीनुमा फूलों से पृथ्वी ढ़की रहती थी । हवा स्वास्थप्रद एवं लाभदायक थी, न अधिक ठण्डी थी और न अधिक गर्मी। कपास के पेड़ चारों ओर फैलकर खुशनुमा वातावरण पैदा करते थे।[6]

इस साहित्यिक विवरण से यह ज्ञात होता है कि जब यह मुसलमान लेखक गुजरात में आया तो वहाँ की भूमि के सौन्दर्य को देखकर विमोहित हो गया परन्तु इतने अल्प समय में वह गुजरात की वास्तविकता को तो नही समझ सका होगा पर जिस भूमि में उसने फल—फूल देखे थे वह उर्वराशक्ति अवश्य थी और गुजरात की भूमि सर्वथा कृषि योग्य थी। वहाँ कृषि लोगो का प्रमुख व्यवसाय था।

---

[6] ताजरयात—उल—अमसर व ताजरयात डल असर, अब्दुला वासफ, इलियट एण्ड डाउसन, 3, पृ0 13।

कृषि सम्बंधी उपकरणः-

कृषि में किन–किन उपकरणों का प्रयोग होता था, इसके विषय में अल्पतम जानकारी है। नील और धान की खेती वहाँ अधिक होती थी जिसके लिए महत्वपूर्ण उपकरणों की अधिक आवश्यकता नही पड़ती । द्वयाश्रय काव्य से पता चलता है कि उस समय लोहे की फाली वाले हल प्रयुक्त होते थे।[7] देशीनाममाला से पता चलता है कि अनाज पैरो से कुचलकर निकाला जाता था जिसको 'पमधा' कहते थे।[8] इससे अधिक प्रत्यक्ष जानकारी हमे कृषि उपकरणो की प्राप्त नही होती। परन्तु फसलों एव गुजरात की भूमि की बनावट को देखते हुए हमारा निष्कर्ष यह है कि जिस मिट्टी में लोहे की फाली से हल चलाया जाता था। होगा, वहाँ उसके सहायक उपकरण निश्चित रूप से होगे जिनमें दरात, खुरपा और कसला इत्यादि रहे होगे। धान की खेती के लिए प्राचीन युग से आज तक पटेला नाम का उपकरण उपयोग होता है जो साधारणतया लकडी का बना होता है। अतः इस बात को स्वीकार किया जा सकता है कि उस समय वहाँ इस उपकरण का भी प्रयोग होता होगा।

सिंचाई और खादः-

सिंचाई का मुख्य साधन वर्षा ही था। रासमाला के एक विवरण से पता चलता है कि अवर्षण के फलस्वरूप राजा का अंश जब किसान न दे पाता था तो उस पर राजा का हिस्सा देने के लिए दबाव डाला जाता था।[9] इसके अतिरिक्त इस युग में अनेक कुओं और तालाबों का निर्माण हुआ। ये तालाब राजकीय संरक्षण में भी बनाए गये और प्रजा द्वारा भी। देश के विभिन्न भागों में उस समय के बने हुए कुएँ पाये गये है। ये कुए दो प्रकार के है– एक तो साधारण गोल कुए है जिनको बाव कहते थे।

---

[7] द्वयाश्रय काव्य, 19:37।

[8] देशीनाममाला, 6, पृ0 40।

[9] रासमाला, अध्याय 13, पृ0 231–32।

दूसरे वे कुए है जिन पर झरोखे दार बैठक बने हुए है।[10] इन कुओं के बारे में यह भी विचार प्रकट किया जाता है कि ये सब कुए मनुष्यों और जीव जन्तुओं की तृष्णा हेतु बनाए गए थे। साधरण किसानों के परिश्रम से बने ये कुँए इस बात का प्रमाण है कि सम्भवतः इन कुओं का प्रयोग कृषि के लिए भी किया जाता होगा, परन्तु पानी निकालने की क्या विधि थी इस विषय में कुछ पता नही चलता।

सिद्वराज के सोनेरिया तालाबों के विवरण से हमे नहर व्यवस्था का थोड़ा सा आभास मिलाता है।'आस–पास प्रदेश से होकर आया हुआ समस्त जल पहले एक अष्ट कोण कुण्ड में एकत्रित होता था जहाँ पर इसका कूड़ा–कचरा बैठ जाता था, और पानी निखर आता था। इस कुण्ड के सामने एक पत्थर लगा रहता था। इस पत्थर पर होकर एक चूने से बनी हुयी नहर के द्वारा पानी एक नाले में से तालाब में आता था। यह ढ़की हुई नहर तीन पृथक–पृथक नालों मं बट गयी थी।[11]इस कथन से यह सिद्व होता है कि नहर और नालों की आधुनिक प्रणाली से परिचित थे।' इन नहरों में पानी कहाँ से आता था? वर्षा के दिनों में पानी तालाबों में संग्रह किया जाता था अथवा उसका सीधा सम्बन्ध नदियों से था। इस विषय में हमारी जानकारी नही है पर इस सम्भावना को नही ठुकराया जा सकता है कि सम्वतः चौलुक्य कालीन लोग सिंचाई के लिए इस प्रणाली का उपयोग करते हो।

इस प्रकार वहाँ पर कृषि की सिचाई के लिए मुख्य रूप से वर्षा का ही सहारा था। नदियों के आस पास की भूमि नदियों द्वारा सींची जाती थी। कुओं का भी प्रयोग सम्भवतः सिंचाई के लिए किया जाता होगा। नहर इत्यादि की प्रणाली से भी वे परिचित थे। हमे अनेक ऐसे विवरण प्राप्त होते है जिसमें हाथी, घोड़े [12] तथा बैल,

---

[10] रासमाला (हिन्दी अनुवाद,बहरा), पृ0 306

[11] रासमाला (हिन्दी अनुवाद, बहरा), पृ0 306

[12]रासमाला, अध्याय, 13, पृ.0 232।

गाय[13] इत्यादि अनेक पशुओं का वर्णन आया है। कसाई का भी वर्णन मिलता है। [14] इससे यह सिद्ध होता है कि वे लोग पशुओं को पालते थे तथा उनके गोबर और मल को खाद के रूप में भी प्रयोग करते थे। हमारा अनुमान है कि उर्वरक (खाद) की परम्परा का भी उन्हे भली–भाँति ज्ञान था।

कृषि विनाशक तत्व और रक्षाः-

हेमचन्द्र का कथन है कि चोरों से खेतों की रक्षा करने के लिए कुत्ते पाले जाते थे तथा चिड़ियों से खेती को बचाने के लिए पुतलों का प्रयोग होता था। परन्तु जब फसल पक जाती थी तो कृषको की पत्नियाँ खेती की रक्षा करती थी,[15] फोर्वस का कथन है कि जब अन्न के अंकुर निकलते थे तो किसान अपने खेत का घेरा ठीक करते थे और उसके चारो ओर काटेदार झाड़िया लगा देते थे जब अन्न के पौधे बड़े हो जाते थे तो किसान चिड़ियों से उसकी रक्षा करते थे। धान के खेतो की रखवाली करती हुई किसानों की स्त्रियाँ जिस प्रकार लोकगीत आजकल गाती है, ठीक उसी प्रकार अस सनय भी वे खेतों में सुमधुर गीतों से आनन्दमय एवं आह्लाद की धारा प्रवाहित कर समस्त वातावरण सगींतमय कर देती थी।[16]

उपर्युक्त विवरणों के आधार पर हम यह निष्कर्ष निकाल सकते है कि कृषि विनाशक तत्वों में जंगली जीव जन्तु, चिड़ियां, तथा चोर इत्यादि थे तथा उनसे रक्षा करने के लिए कुत्तों, काटेदार झाड़ियों, पुतलों तथा मचानों का प्रयोग किया जाता था। कृषक महिलाओं का भी रक्षण में पर्याप्त सहयोग रहता था।

---

[13] देशी नामभाला, 2, पृ0 98।

[14] देशीनामभाला, 2, पृ0 70।

[15] द्वयाश्रय काव्य, 15, 49, 18:30।

[16] रासमाला, अध्याय 13, पृ0 232।

उपजः-

चौलुक्य काल गुजरात की उर्वरा भूमि में अनेक फसले पैदा होती थी पर उनमें सम्भवतया चावल की फसल मुख्य थी। हेमचन्द्र ने चावल के लिए अनेक देशी शब्दों का प्रयोग किया है। अणु और जोवारी ऐसे ही शब्द है। द्वयाश्रय काव्य में शालिधान्य शब्द का प्रयोग चावल के लिए किया है।[17] ये सब नाम चावल के विभिन्न प्रकारों के लिए है अथवा एक–दूसरे के पर्यायवाची है, कहाँ नही जा सकता। परन्तु ये सब चावल की उपज के दृढ़ सकेंत है।

गेहूँः-

किरादू और रतनपुर प्रस्तर लेखों से विदित होता है कि माँस के अतिरिक्त गेहूँ भी भोजन में प्रयुक्त होता था। [18] अलइर्दसी (स0 1154) का कथन है कि कोम्बें में गेहूँ पैदा होता था। [19]तथा लेखापद्वति के एक विवरण से ज्ञात होता है कि ज्येष्ठ के माह में गेहूँ पकता था।[20] इससे यह सिद्ध होता है कि गुजरात में गेहूँ की पैदावार होती थी।

चनाः-

चना भी गुजरात में पैदा होता था, ऐसा विवरण हमें मिलता है।[21]

दालेंः-

हेमचन्द्र देशीनाममाला में उदीदो (माष धान्य) शब्द देता है जो सम्भवतः उड़द की काली दाल का संकेत प्रतीत होता है। हेमचन्द्र के देशीनाम माला में मंसूर का भी

---

[17] द्वयाश्रय काव्य, 3 श्लोक 4–5।

[18] भावनगर इन्सक्रिपसन, पृ0 205–7।

[19] इलियट एण्ड डाऊसन, 1, पृ0 85।

[20] लेखापद्धति पृ0 2।

[21] देशीनाममाला,1, पृ0 2।

सकेंत मिलता है।[22] इसके अतिरिक्त कुछ और दाले भी थी जिनका हेमचन्द्र ने विवरण नही दिया है।

हेमचन्द्र अभिधानचिन्तामणि की टीका करते हुए एक प्रसंग में सतरह (17) अन्न के नाम गिनाते है। साधारणतः उसने सब अन्नों के लिए 'धान्य' शब्द का ही प्रयोग किया है अन्न की श्रेणी में उसने दालें और चने को ही सम्मलित नही किया है बल्कि पटुआ और तिल को भी इसी श्रेणी में लिया है।[23] ये सत्रह अन्न इस प्रकार है–

1–ब्रीहि (चावल)

2–यव (जौ)

3–मसूर (मसूर)

4–गोधूम (गेहूँ)

5–मुद्ग (मुँग)

6–माष (काली उड़द की दाल)

7–तिल (तिल)

8–चणक (चना)

9–प्रियंग (बाजरा विदेशी)

10–कोद्रव (सवाई)

11–मायष्ठिका (कुचला)

12–अणव (ज्वार)

13–शाली (चावल)

14–ओधाकि (कबूतरों का मटर)

15–कुलाठा (घोड़ो का चना)

16–कल्य(मटर)

17–सण(सन)

हेमचन्द्र उपयुक्त सारणी में जिन फसलों और अन्नों की उपज का वर्णन करता है, वह सम्भवतः सभी अन्नों का व्यौरा है। परन्तु इसके अतिरिक्त वहाँ कुछ और वस्तुओं का उत्पादन भी होता था जो निम्नवत है–

---

[22] देशीनाममाला पृ0110।

[23] अभिधानचिन्तामणि 5, 235।

नीलः-

चौलुक्य कालीन गुजरात में उस समय नील की खेती का प्रचलन था मार्को पोलो का कथन है कि उस समय गुजरात में अत्यधिक मात्रा में नील का उत्पादन होता था। [24]हेमचन्द्र ने भी नील के रंग का वर्णन किया है।[25]

गन्नाः-

हेमचन्द्र गन्ने के कई नाम देता है। गन्ना वहाँ के उद्योगों में भी महत्वपूर्ण स्थान है रखता था। देशीनाममाला में इंगोली, अगंगोलियन, गणडीरी इत्यादि नाम गन्ने के लिए है। यह भी हो सकता है कि ये तीन प्रकार के गन्नों के नाम हो। गन्नों के खेत को 'उच्छुररम्' कहते थे।[26]

कपास की खेतीः-

गुजरात की भूमि में कपास की उपज को मुसलमान यात्रियों, मार्को पोलो इत्यादि सभी विद्वानों ने स्वीकार किया है। मार्को पोलो (1294 ई) ने एक विवरण में बताया है कि गुजरात में बीस साल पुराने कपास के पेड़ों से भी कपास बीनी जाती है परन्तु बारह वर्षों के कम आयु के पेड़ की ही कपास प्रयोग में आती है। यद्यपि यह प्रत्यक्ष विवरण नही है परन्तु हमारा अनुमान है जहाँ बीस वर्ष तक कपास के पेड़ को जीवित रखने की विधि ज्ञात हो वहाँ यह स्वीकार करने में नही होनी चाहिए कि चौलुक्य युग में कपास की खेती होती थी। देशीनाममाला में भी कपास का वर्णन है।[27]

---

[24] मार्को पोलो (अनुवादितः ए0 रोक्की,1931), पृ0332

[25] त्रिषष्टिश्लाकापुरूषचरित, 3, 156।

[26] देशीनाममाला, 2, पृ018

[27] देशीनाममाला, 2, पृ018

देशीनाममाला में 'उममात्तो' शब्द आया है, अरण्ड का पेड़। और इससे एक प्रकार का तेल तैयार किया जाता था।[28] सम्भवतः अरण्ड की वहाँ खेती होती होगी। तिल के तेल का भी उन्हे ज्ञान था।

शाक और फलादिः-

द्वयाश्रय काव्य में लगभग आजकल प्रचलित सभी फलों के नाम दिये हुए है।[29]जिससे पता चलता है कि सब फलों का उत्पादन गुंजरात में होता था देशीनाममाला हमें में भी कुछ फलों के नाम मिलते हैं जैसे आम, सन्तरा, केला और अनार इत्यादि।[30] इससे प्रकट होता है कि फलो का उत्पादन चौलुक्य युग में होता था।

पशुपालन और चारागाहः-

कृषि प्रधान देश में पशुओं को पालना बड़ी स्वाभाविक सी बात है। हाथी घोडे का उपयोग लड़ाई के दिनों में होता था। इसके अतिरिक्त हेमचन्द्र के देशीनाममाला में बैल, गाय[31] इत्यादि का वर्णन आया है। द्वयाश्रय काव्य से पता चलता है कि उस समय लोहे की फालीका से हल चलाया जाता था।[32] इस हल को खीचने का कार्य बैल ही करते थे। सोमप्रभा का कथन है कि यहाँ पानी माँगने पर दूध मिलता था।[33] इससे पता चलता है कि दूध के पशु यहाँ बहुत एहतियात से पाले जाते थे। पशुओं के चरने के लिए क्या व्यवस्था थी, इस विषय में ठीक से पता नहीं चलता। परन्तु हेमचन्द्र गोपालक शब्द का प्रयोग करता है। इस आधार पर सम्भावना यह है कि

---

[28] देशीनाममाला, 1, पृ0 98।

[29] रासमाला, अध्याय 13, पृ0 232।

[30] देशीनाममाला, पृ0 98

[31] द्वयाश्रय काव्य 19 : 37।

[32] टाडः वैस्टर्न इण्डिया, पृ0 156–58।

[33] देशीनाममाला, पृ0 98

चौलुक्य काल (गुजरात) में सभी आवश्यक पशु पाले जाते थे। उनके चारे के लिए कृषि का बचा हुआ सामान तथा चारागाह बनाये जाते थे।

उद्योग धन्धे :-

चौलुक्य युग में अनेक उद्योग–धन्धें थे जिनका आर्थिक जीवन में अत्यधिक महत्व था जिसमें प्रमुख निम्नलिखित है--

1-कपड़े का उद्योग :-

ईसा की प्रथम शताब्दी से ही गुजरात में कपड़े का उत्पादन होता था। 13वीं शताब्दी में मार्को पोलो के विवरण से पता चलता है कि जिस समय वह भारत में आया उस समय गुजरात ने कपड़े के क्षेत्र में विशिष्ठता प्राप्त कर ली थी। काठियावाड़ में अधिक मात्रा में बुकरम का उत्पादन होता था तथा भड़ौच तरह–तरह के सुन्दर कपड़ों का केन्द्र था।[34] इस अधिकार पर हमारा यह निष्कर्ष है कि चौलुक्य युग में भी इस उद्योग का अत्यधिक महत्व था। रासमाला के विवरण से भी इस बात की पुष्टि होती है कि लोग शाल और उत्तरीय धारण करते थे, स्त्रियॉं सुन्दर साड़ियां धारण करती थी, जो यही पर तैयार होती थी।

2- गुड़ का उद्योग :-

प्रबन्ध चिन्तामणि तथा द्वयाश्रय काव्य उससे बने गुण तथा रस का वर्णन है।[35] गन्ने को दबाकर रस निकाला जाता था,[36] और सम्भवतः यह यंन्त्र बॉंस का बनाया जाता था।

---

[34] मार्को पोलो, 334।

[35] प्रबन्धचिन्तामणि (अन0 टानवी) 70 द्वयाश्रय काव्य 3, लोक 9

[36] देशीनाममाला, 6, पृ0 51।

3- चमड़े का उद्योग :-

प्रारम्भ में कुछ चौलुक्य कालीन शासक माँस खाते थे परन्तु बाद में वे जैन धर्म से प्रभावित होने के बाद उन्होंने जीव हत्या को अपराध घोषित कर दिया था।[37] परन्तु यात्री लेखक नार्को पोलो का कथन है कि भेड़, भैस, जंगली साड़ इत्यादि की खाल का प्रयोग होता था। इससे तो यह प्रकट होता है कि चौलुक्य शासकों के जीव हत्या न करने का बहुत कम प्रभाव हुआ था, परन्तु इस सम्भावना के विपरीत इस तथ्य को भी आँखों से ओझल नहीं करना चाहिए कि प्राकृतिक पशु के मृत्यु के बाद उनका चमड़ा प्रयोग करके सुन्दर वस्तुओं का निर्माण हो सकता है और ऐसा वहाँ पर होता भी था लेखापद्धति के एक विवरण में कहा गया है कि चमड़े के चोर को अत्यधिक जुर्माना देना पड़ता था।[38] पके हुए चमड़े से तरह तरह के जूते तैयार होते थे। अलमसूदी (943 ई0) का कथन है कि 'कोम्बे के सैडिल' बहुत मशहूर थे। हेमचन्द्र ने जूतों और जूते बनाने वाले कर्मचारियों का विवरण दिया है।

4- भवन निर्माण उद्योग :-

लगभग सभी साहित्यिक विवरण एवं शिलालेख इस बात को स्वीकार करते हैं कि चौलुक्य शासक महान निर्माता थे। अनहिलवाड़ा और अन्य नगरों की भव्यता का वर्णन किया गया है। उस युग में मन्दिरों का निर्माण हुआ। अतः अनेक कलाकार तथा मजदूर इस कार्य में लगे रहते थे। इसके साथ–साथ मजदूरों का एक बहुत बड़ा भाग ईंट बनाने वालों का, बढ़ई का कार्य करने वालों का तथा पत्थर पर मन्दिरों का निर्माण हुआ। अतः मजदूरों का अनेक कलाकार तथा मजूमदार इस कार्य में लगे रहते थे। इसके खोदने वालों का था। इसलिए इस उद्योग ने बहुत से धन्धों को भी जन्म दिया।

---

[37] भावनगर इन्सक्रिप्शन पृ0 205–207।

[38] लेखापद्धति, पृ0 16।

लोहे और पीतल के उद्योग :-

पत्थरों पर चौलुक्य कला के उपदेश खोदने वाले कलाकार को छेनी, हथौड़ी तथा संगमरमर पर चित्र खोदने वाले कलाकार की छेनी, हथौड़ी तथा संगमरमर पर चित्र खोदने वाले संगतराश के औजार लोहे के ही बनते थे। कृषकों के हल का फाल भी लोहे का होता था। लड़ाई की तलवार और भाले भी लोहे के ही बनाये जाते थे जो इस बात का प्रमाण है कि लोहे को गलाकार इतने सुदृढ़ एवं सुन्दर औजार और शस्त्र बनाने का ज्ञान उनको था। इसके अतिरिक्त घर के कार्यों के लिए पीतल तथा ताँबे का प्रयोग भी होता था।

व्यवसायिक संगठनः-

हेमचन्द्र ने त्रिषष्टिशलाकापुरूषचरित में 18 व्यवसायिक श्रेणियों के नाम दिये है जो इस बात का प्रमाण है कि व्यवसायिक संगठन राजकीय इकाई के रूप में उस युग में विद्यमान था, परन्तु उस युग के किसी भी लेखक ने इन संगठनों और श्रेणियों के नाम नही दिये है। एक ग्रन्थ 'जम्बूद्वीप प्रजापति' में अट्ठारह संगठनों के नाम दिये हुए है।[39] जो सम्भवतः चौलुक्य युग के है।

1.	कुम्भकार	(कुम्भकार) ।
2.	पटटेला	(पटटेला)
3.	स्वर्णकार	(स्वर्णकार)
4.	सूपकार	(सूपकार)
5.	गन्धर्व	(गन्धर्व)
6.	कास्वग	(मालाकार)
7.	मालाकार	(नाईयों का संघ)
8.	कच्छकार	(रस्सी तैयार करने वाले)

[39] जंम्बूद्वीप प्रजापति, 43 पृ0 193।

9.	ताम्बुलियो	(पान वाले)
10.	चाम्यारू	(चर्मकार)
11.	जन्तपिलग	(गन्नो का रस निकालने वाले)
12.	वरद	(हेमचन्द्र के अनुसार निम्नकुल के मनुष्य)
13.	चिम्प्या	(छीपी)
14.	कंसकार	(ठठेरा)
15.	सिवग	(दर्जी)
16.	गुआरा	(ग्वाला)
17.	भील	(कबीला)
18.	धीवर	(मछली पकड़ने वाला)

उपर्युक्त तालिका में जो विभिन्न श्रेणियों के नाम दिये हुए हैं वे प्रायः समाज के सभी वर्णो के नाम है, जो विभिन्न श्रेणियाँ बनाकर रहते थे। चालुक्य आर्थिक जीवन में यह एक आर्थिक संगठन था, वर्ण व्यवस्था का बटवारा न था। इसका कारण हमें सम्भवतः तो यही प्रतीत होता है कि विभिन्न आर्थिक इकाइयेां का यह श्रेणी संगठन वहाँ के स्वायत्त शासन की महत्वपूर्ण कड़ी था जिसमें ये अपने हितों की रक्षा भी करते थे और समाज की सेवा भी।

उनके अधिकार और कर्त्तव्य :-

इन व्यवसायिक संगठनों का शासन पर प्रभाव था। इस युग में कुबेर, महत्तर, महाजन तथा वणिक की श्रेणियां अत्यन्त प्रमुख थी। इन श्रेणियों का अत्यधिक महत्व था। अतः श्रेणियों को अपने स्तत्व की रक्षा करने तथा उन्नति का पूरा अधिकार था परन्तु प्रशासकीय आज्ञा का पालन करना इनका पुनीत कर्त्तव्य था।

प्रमुख व्यवसाय :-

चौलुक्य युग में समाज का सबसे बड़ा भाग कृषि में लगा था। उसके बाद एक वर्ग राजकीय सेवा में था इसके अतिरिक्त स्वाभाविक रूप से अन्य भाग विभिन्न व्यवसायों में लगे होंगे। समकालीन साहित्य के आधार पर हम विभिन्न व्यवसायों की एक तालिका प्रस्तुत कर सकते है जिससे हमे यह भी पता चलेगा कि उस युग में किन–किन क्षेत्रों में आर्थिक क्रिया कलाप चल रहे थे।

1.	मेधों (व्यापारी का सचिव)	दे0 ना0 6 पृ0 138।
2.	पाये (नाई वाई बनाने वाला)	दे0 ना0 6 पृ0 43।
3.	चन्डालियों (नाई)	दे0 ना0 3 पृ0 2।
4.	ताम्बुलक (पान बेचने वाला)	भाव0 इन्स0 पृ0 58।
5.	वणाओं (सर्राफ)	दे0 ना0 7 पृ0 54।
6.	खटीकों (कसाई)	दे0 ना0 2 पृ0 70।
7.	वाच्छवों (गायो वाला)	दे0 ना0 7 पृ0 41।
8.	गनजियों (मंन्दिर बनाने की जगह)	दे0 ना0 2 पृ0 85।
9.	उन्छायों (रंगाई का काम करने वाले)	दे0 ना0 1 पृ0 98।
10.	छिम्पीकायों (छीपी)	प्र0 च0 (जि) पृ0 56।
11.	वधूलि (माला बनाने वाले)	दे0 ना0 7 पृ0 42।
12.	द्याझियों (सुनार)	दे0 ना0 5 पृ0 39।
13.	विधियों (साहूकार)	दे0 ना0 7 पृ0 77।
14.	रत्न परीक्षक (र0 प0)	प्र0 च0 (जि) पृ0 69।
15.	भूओ (यन्त्र वाला)	दे0 ना0 6 पृ0 107।
16.	ग्वाला (ग्वाला)	दे0 ना0 2 पृ0 98।
17.	कास्यकार (कास्यकार)	प्र0 चि0 (जि) पृ0 69।

18.	वैद्य (वैद्य)	प्र0 चि0 (जि) पृ0 53।
19.	कुलाल (कुम्हार)	प्र0 चि0 (जि) पृ0 77।
20.	पुर–कुम्भकार (नगर का कुम्हार)	प्र0 चि0 (जि) पृ0 3।
21.	कुट्टाओं (जूते बनाने वाला)	दे0 ना0 7 पृ0 44।
22.	इक्कारों (लुहार)	दे0 ना0 1 पृ0 144।
23.	सूचिक (दर्जी)	प्र0 चि0 (जि0) पृ0 32।
24.	धओ (धोबी)	दे0 ना0 5 पृ0 32।
25.	कहारो (कहार)	दे0 ना0 2 पृ0 27।
26.	तमारियों (औजार साफ करने वाला)	दे0 ना0 5 पृ0 18।
27.	कोलियो (जुलाहा)	दे0 ना0 2 पृ0 65।
28.	उद्यो (कुंआ खोदने वाला)	दे0 ना0 1 पृ0 85।
29.	पातो (शराब बेचने वाला)	दे0 ना0 6 पृ0 75।

उपर्युक्त तालिका से हमें उस काल के विभिन्न व्यवसायों की धूमिल सी झलक मिलती है। जिस मनुष्य को जो रूचिकर प्रतीत होता था वह उसे ही करने लगता था। परन्तु जहां तक प्रमुख व्यवसायों का समबन्ध है उसमें कृषि और व्यापार ही प्रथन श्रेणी में आते थे। कृषि से राज्य को सबसे अधिक आय होती थी अथवा राज्य की आय का मुख्य स्रोत भूमि थी इसलिए यह सिद्ध होता है कि कृषि प्रमुख व्यवसाय था। दूसरे प्रमुख व्यवसायों में व्यापार का स्थान था। चौलुक्य शासकों के ऊपर इन व्यापारियों का प्रभाव था। पाटन के व्यापारी बड़े धनाढ्य थे।[40] इसके बाद सम्भवतः कपड़े, हीरे जवाहरात के व्यवसाय थे और उपयुक्त तालिका के व्यवसायों में ही दिये गये हैं।

---

[40] रासमाला, अध्याय 13, पृ0 235

आर्थिक संगठन के मूलाधार :-

इस काल के आर्थिक जीवन सम्बन्धी साक्ष्यों के विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि देश का आर्थिक जीवन भली–भांति संगठित था और उसके कुछ विशेष मूलाधार थे। जो अग्रलिखित है–

व्यवसायिक परम्परा :-

इस युग में विभिन्न श्रेणियों एव व्यवसायों का अस्तित्व था, जो इस बात का दृढ़ संकेत है कि व्यवसायिक परम्परा का प्रचलन था। गिरनार शिलालेख से पता चलता है कि गिरनार पर्वत पर जितने भी मन्दिरों का निर्माण हुआ, उसका शिल्पकार हरिपाल था। उसके बाद में यह अधिकार उसके उत्तराधिकारियों को प्राप्त होता रहा।[41] इससे यह सिद्ध होता है कि साधारणतया पिता जिस व्यवसाय को अपनाता था, पुत्र उसी को अपना लेता था। परन्तु यह कोई नियम न था बल्कि इसके कुछ भौतिक लाभ थे। व्यापारियों के पुत्रों एवं उसके परिवार के सदस्यों को जितना ज्ञान व्यापार को हो सकता था उतना अन्य व्यवसाय से नही हो सकता था। अतः चौलुक्य युग में विभिन्न व्यवसायों में शिक्षा का कारण गुजरात में व्यवसायिक परम्परा का ही प्रयोग था।

व्यवसायिक सौहार्दः-

प्रबन्धचिन्तामणि से पता चलता है कि उदयन जाति का बनिया ही नही था बल्कि प्रारम्भ में व्यापारी भी था, परन्तु अपनी योग्यता से उसने मंन्त्री पद प्राप्त किया।[42]सूरक्षेत्र के अभियान में (सिद्धराज के समय) उदयन ने भाग लिया था तथा उसके पुत्र आम्भट ने चौलुक्य सेना की कमान कोंकण नरेश मल्लिकार्जुन के विरूद्ध संभाली थी। इससे यह सिद्ध होता है कि कोई भी मनुष्य अपनी जातीय प्रतिष्ठा तथा

---

[41]पी0 ओ0 3, पृ0 2।

[42] प्रबन्ध चिन्तामणि (जि0), पृ0 56

घन के लिए अपने व्यवसाय को परिवर्तित कर सकता था उसके लिए न तो सामाजिक बन्धन था न व्यापारिक प्रतिस्पर्द्धा । उस युग में हमें कोई भी ऐसा विवरण प्राप्त नही होता जिसके आधार पर यह सिद्ध हो कि उस युग में व्यवसायिक सोहार्द न हो। मेरूतुग का कथन है कि एक व्यापारी के पुत्र जिस का नाम अभड़े था परिस्थितियों वंश उस स्थिति में पहुंच गया कि ठठेरो के बाजार में पाँच साधारण सी मुद्रा प्राप्त करता था, जिससे उसकी प्रतिदिन की आवश्यकताए भी पूरी नही होती थी। उसने रत्न परीक्षा इत्यादि पुस्तकों का अध्ययन किया तथा एक रत्न परीक्षक के पास बैठकर इस व्यवसाय में अत्यधिक निपुण बन गया। सौभाग्य से उसे एक रत्न मिल गया जिसको उसने राजा के हाथों महंगे दामों में बेच दिया। बाद में यही आदमी उस नगर सर्वप्रमुख धनाद्य व्यक्ति बन गया।[43] इस कहानी से भी यह पता चलता है कि जिसमें जितनी योग्यता हो वह उसी के अनुसार किसी भी व्यवसाय को अपनाकर अपनी स्थिति सुदृढ़ कर सकता था। इससे यह प्रकट होता है कि उस भाग में जाति और युग व्यवसाय का कोई बन्धन तो न था परन्तु परम्परागत व्यवसाय की अभिरूचि अधिक थी। अनहिलवाड़ा के वर्णन से विदित होता है कि मोहल्ले का विभाजन किसी सीमा तक व्यवसायों से प्रभावित था। सम्भवतः इसका कारण यही रहा होगा कि व्यवसायों का स्थानीयकरण हो रहा था।

क्रय विक्रय :-

आर्थिक रूप से सुदृढ़ चौलुक्य युग की कोई भी मुद्रा नही मिलती, जिसके परिणाम स्वरूप स्वल्प क्रय–विक्रय का क्या माध्यम था, इस बात को जानने के लिए कुछ उलझना सामने आती है। 12 वी शताब्दी में चौलुक्य साम्राज्य आर्थिक सम्पन्नता के विचार से अधिक समृद्ध था। समसामायिक साहित्य, विदेशी इतिहासकारों के विवरण तथा अन्य साधनों से इसकी पुष्टि होती है। तत्कालीन नाटक मोहराज पराजय

---

[43] प्रबन्धचिन्तामणि (जि0) पृ0 69

में कुबेर के पास छः करोड़ स्वर्ण मुद्रा और अनेक तोले रजत इत्यादि थे।[44] द्वयाश्रय काव्य में हमे निम्नलिखित सिक्कों का पता चलता है–

1–भागक (रूप का आधा भाग)।

2–रूप का।

3–वंशातिका (जो 20 रूप के बराबर था) द्वयाश्रय काव्य 17 श्लोक 94, 80–1 ।

4–कार्षापण (द्वयाश्रय काव्य 17 श्लोक 79 तथा 84)

5–निष्क (स्वर्ण मुद्रा)

6–सूरपा

7–दुम

मेरूंतग से निम्नलिखित सिक्को का पता चलता है–

1–दिनार ।[45] (यह चालुक्य मुद्रा नही है)

2–निष्क।[46]

3–द्रम ।[47]

4–वंशोपक ।[48]

5–रणक (स्वर्ण मुद्रा)[49] (यह चालुक्य मुद्रा नही है)

चालुक्य शिलालेखो से हमे निम्नलिखित सिक्कों का पता चलता है–

---

[44] मोहनराज पराजय।

[45] –प्रबन्धचिन्तामणि (टानवी), पृ0 8

[46] –प्रबन्धचिन्तामणि(टानवी), पृ010

[47] –प्रबन्धचिन्तामणि(टानवी), पृ0104

[48] –प्रबन्धचिन्तामणि(टानवी), पृ0 104

[49] –मोहनराजपराजय, अंक 3, पृ0 51– 52

1–द्रम (आइ0 ए0 6 पृ202, ई0 आई0 272)।

2–वंशोपक (ई0 आई0 1, पृ0 166)।

3–रूपक (आई0 ए0 11 पृ0 337)।

4–कार्षापण (भावनगर इन्सक्रपशन पृ0 158)।

5–विशाल प्रियाद्रम (ई0 आई0 11 पृ0 58)।

6–भीमप्रिया वंशोपक (ई0 आई0 11 पृ0 59)।

इस प्रकार साहित्य और शिलालेखों में विभिन्न प्रकार के नाम मिलते थे जो निश्चित रूप से क्रय–विक्रय का माध्यम रहे होगे। सिद्धराज कें युग की दो स्वर्ण मुद्राएं तथा चार चाँदी की मुद्राए उत्तर–प्रदेश में मिली है इसलिए चौलुक्यों के पूर्ववर्ती शासक की मुद्राएं यह प्रकट करती है कि चौलुक्यां ने भी मुद्राओं का प्रचलन अवश्य किया होगा, परन्तु दुर्भाग्य से वे नही मिल पाते। हमारा अनुमान है कि सम्भवतःनिम्न कारण मुद्रा न मिलने के लिए उत्तरदायी है–

प्रथम तो यह कि चौलुक्य काल के बाद जितने भी यवन आक्रमण हुए उनमें स्वर्ण के भूखे लोगों ने मनमानी लूटपाट की। इससे बहुत सी स्वर्ण और रजत मुद्राए नष्ट हो गयी तथा बहुत सी विदेश ले जायी गयी होगी दूसरे सिक्कों के बारे में यह भी साधारण सा नियम है कि राज्य परिवर्तन अथवा नवीन राजा के गद्दी पर बैठने के समय पुरानी राजमुद्राओं को गलाकर नवीन रूप दे दिया जाता है। इसी परम्परा में चौलुक्य काल की मुद्राए नष्ट हो सकती है।

इस प्रकार यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता है कि क्रय–विक्रय को क्रिया में सिक्कों का प्रचलन था और यही व्यापार का माध्यम था।

विदेशी व्यापारः-

चौलुक्य युग में विदेशी व्यापार होता था। यशपाल का कथन है कि राजधानी में कुवेर नामक कोट्यधीश का निधन समुंद्र यात्रा में हो गया।[50] कुवेर विदेशों से व्यापार करने के लिए पाटन से भड़ौच गया था और वहाँ से 500 पोतो में व्यापार योग्य सामाग्री भरकर विदेश गया था। विदेशों में अपना सारा माल विक्रय कर उसने चार करोड़ मुद्राए प्राप्त की। वहाँ से स्वदेश लौटते समय सागर में झझावत आया और उसके सारे पोत छिन्न भिन्न हो गये। कुछ जहाज भारूच (मृगुकच्छ) में आ लगे, किन्तु कुवेर का पता नही लग सका। इस प्रकार समुद्र में विशाल और बहुसंख्यक पोतों द्वारा व्यवसाय का वर्णन मिलता है। समुंद्री डाकुओं का भी उल्लेख है। विदेश से समुंद्र पर व्यवसाय करने वाले संपात्रिक कहे जाते थे।

योगराज के शासन काल में एक विदेशी राजा का हाथी, घोड़ो और अन्य व्यापारिक वस्तुओ से भरपूर जहाज सोमेश्वर पाटन के बन्दरगाह मे बहकर चला आया था। सिद्धराज जयसिंह के काल में संयात्रिक डाकुओं के भय से गाँठो और बण्डलों में स्वर्ण छुपाकर ले जाया जाता था।[51]

चौलुक्य युग में पुंचमुख नगर का एक सदस्य नाववातिक वर्ग से भी लिया जाता था। नगर के शासन में नाववातिक वर्ग का इतना महत्व होना इस बात को सिद्ध करता है कि उनका समाज में महत्व था और उस महत्व के पीछे उन कोटीश्वरों का भी प्रभाव था जो विदेशी व्यापार के पीछे उन कोटीश्वरों का भी प्रभाव था जो विदेशी व्यापार में सिरमौर थे। इसके अतिरिक्त चौलुक्य शासको की आय के प्रमुख स्रोतो में व्यापार था। इन सब प्रमाणों से यह निष्कर्ष निकलता है कि इस युग में विदेशी व्यापार राज्य के प्रमुख व्यवसायों में से एक था।

---

[50] –मोहनराज पराजय, अंक 3 पृ0 51–52

[51]–रासमाला अध्याय 13, पृ0 235

आयात-निर्यातः-

उस युग में सम्भवतया कुकरम, पका हुआ चमड़ा, चमड़े से बना सामान तथा कपड़े का सामान विदेशों में मे जाता था।

बाहर जाने वाले माल पर 'दाण' लिया जाता था तथा बाहर से आने वाले माल पर चुँगी लगती थी। बन्दरगाहों का शुल्क भी आय का महत्वपूर्ण साधन था।

वणिक सेनाः-

चौलुक्यों के शासन को सुदृढ़ करने में वणिकों का अत्यधिक सहयोग था। नगर और ग्राम शासन में हो नही बल्कि केन्द्र को भी वे प्रभावित करते रहते थे। कोटि ध्वज फहराने का उन्हे अधिकार था, परन्तु वे अपनी सेना रखते थे। इस बात का हमें कोई विवरण प्राप्त नही होता। चौलुक्य युग में सामन्त प्रथा का अस्तित्व था। और उन्हें सेना रखने का अधिकार भी था। समय–समय वे राजा को सहायता भी देते थे। चौलुक्य शासकों में कुमारपाल की सिंहासन दिलवाने मे उदयन और उसके पुत्रों न सहायता दी थी। उदयन जाति का वणिक था और प्रारम्भ में व्यापार भी करता था तथा अपनी सेना भी रखता था। अतः उसको मंत्री या सामन्त स्वीकार करना ही उचित है। उपर्युक्त आधारों पर हमारा अनुमान है कि चौलुक्य युग में वणिक सेना का अस्तित्व नही था, परन्तु समुद्री डाकुओं के भय से चौलुक्य शासकों ने वणिकों को थोड़ी बहुत सेना रखने की अनुमति दे दी हो ऐसा विश्वास किया जा सकता है, परन्तु यह केवल सम्भावना ही है। इसके विषय में हमारे पास कोई प्रमाण नही हैं।

राज्य का सम्बन्ध और नियंत्रणः-

चौलुक्य शासक सर्वसत्तासम्पन्न सम्राट थे। उनके साम्राज्य में वणिकों का स्थान प्रभावशाली था। सम्भवतः इसका कारण यही था कि चौलुक्य शासकों के जीवन में वणिक सम्प्रदाय ने महत्वपूर्ण योगदान दिया था राजकीय रूप मे भी चौलुक्य शासकों के वणिक सम्प्रदाय से दो प्रकार के सम्बन्ध थे। प्रथम तो यह कि वह उन्हें

उन्नति करने का पूरा–पूरा अवसर देते थे अथवा उन्हे अपने धन इत्यादि के कारण मान भी मिलता था। दूसरे वणिक–संध अपनी भावनाओं की अभिव्यत्ति पंचमुख नगर के रूप में भी करता था। इस प्रकार राज्य शासन की इकाइयों की ये अभिव्यक्ति मात्र ही थे।

परन्तु चौलुक्य शासकों की नीति के अनुसार इस संघ पर उनका पूर्ण नियंत्रण था। राजा द्वारा नियत कर राशि उन्हे राजकोष में जमा करनी पड़ती थी। इनके संघ और श्रेणी शासन की छत्रछाया में इकाई के रूप में थी जो राज नियमों को प्रभावित तो करती थी। परन्तु उन्हे अपनी बात मनवाने का अधिकार न था जितना भी व्यापार होता था उसके ऊपर शासन का अधिकार होता था